उक्कस्सा ।। २३६ ।।

कुदो ? लोगे आवूरिदे जीवादो अभिण्णाणमेदेसिं कम्माणं वेयणीयस्सेव [1]सव्वलोगा-वट्ठाणुवलंभादो ।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ।। २३७ ।।

जहा वेयणीए णिरुद्धे सेसकम्माणं परूवणा कदा तहा एदेसु वि तिसु कम्मेसु णिरुद्धेसु परूवणा कायव्वा ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स छण्णं कम्माण-माउअवज्जाणं वेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? ।। २३८ ।।

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा असंखेज्जभागहीणा ।। २३९ ।।

णाणावरणीएण सह जदि सेसछकम्मेहि उक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तो णाणावरणीएण सह सेसछकम्माणि वि ट्ठिदिं पडुच्च उक्कस्साणि चेव होंति । जदि पुण विसेसपच्चएहि सेसकम्माणि विगलाणि होंति तो णाणावरणट्ठिदीए उक्कस्सीए संतीए सेसकम्मट्ठिदी

....

उत्कृष्ट होती है ।। २३६ ।।

कारण कि लोकके पूर्ण होनेपर अर्थात् लोकपूरणसमुद्घातमें जीवसे अभिन्न इन कर्मोंका वेदनीयके ही समान सब लोकमें अवस्थान पाया जाता है ।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्रकी विवक्षामें भी प्ररूपणा करनी चाहिये ।। २३७ ।।

जिस प्रकारसे वेदनीय कर्मकी विवक्षामें शेष कर्मोंकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकारसे इन तीन कर्मोंकी विवक्षामें प्ररूपणा करनी चाहिये ।

जिसके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके आयुको छोड शेष छह कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ।। २३८ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी । उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट असंख्यातभाग हीन होती है ।। २३९ ।।

ज्ञानावरणीयके साथ यदि शेष छह कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधी गई है तो ज्ञानावरणीयके साथ शेष छह कर्म भी स्थितिकी अपेक्षा उत्कृष्ट ही होते हैं । परन्तु यदि विशेष प्रत्ययोंसे शेष कर्म विकल होते हैं तो ज्ञानावरणीयकी स्थितिके उत्कृष्ट होनेपर शेष कर्मोंकी स्थिति अनुत्कृष्ट होती है,

....

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'सव्वा', इति पाठः ।

अणुक्कस्सा होदि, विसेसपच्चयविगलत्तणेण एगसमयमादिं कादूण जाव उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीणं परिहाणिदंसणादो । परिहीणट्ठिदीणं को पडिभागो ? सादिरेयउक्कस्साबाहा । कुदो ? उक्कस्साबाहाए उक्कस्सट्ठिदीए खंडिदाए तत्थ एगखंडस्स रूवूणमेत्तस्स परिहाणिदंसणादो । उक्कस्सेण एत्तिया चेव हाणी होदि, अण्णहा आबाहाहाणीए णाणावरणीयस्स वि उक्कस्सट्ठिदीए अभावप्पसंगादो ।

तस्स आउअवेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? ।। २४० ।।

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा चउट्ठाणपदिदा ।। २४१ ।।

णाणावरणीयट्ठिदीए उक्कस्सियाए बज्झमाणियाए जदि आउअस्स वि पुव्वकोडितिभागपढमसमए उक्कस्सबंधो होदि तो णाणावरणीयट्ठिदीए सह आउट्ठिदी वि उक्कस्सा होदि । अण्णहा अणुक्कस्सा होदूण चउट्ठाणपदिदा होदि । तं जहा- णाणावरणीयस्स उक्कस्सट्ठिदिं बंधमाणेण समऊणदुसमऊणादिकमेण पुव्वकोडितिभागाहियतेत्तीससागरोवमाणि उक्कस्ससंखेज्जेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं जाव परिहाइदूण आउए पबद्धे असंखेज्जभागहाणी होदि । तत्तो

....

क्योंकि, विशेष प्रत्ययोंसे विकल होनेके कारण एक समयसे लेकर उत्कृष्ट रूपसे पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थितियोंकी हानि देखी जाती है ।

शंका – हीन स्थितियोंका प्रतिभाग क्या हैं ?

समाधान – उनका प्रतिभाग साधिक उत्कृष्ट आबाधा है, क्योंकि, उत्कृष्ट आबाधासे उत्कृष्ट स्थितिको खण्डित करनेपर उसमें एक कम एक खण्ड मात्रकी हानि देखी जाती है ।

उत्कृष्टसे इतनी मात्र ही हानि होती है, क्योंकि, अन्यथा आबाधाकी हानि होनेपर ज्ञानावरणीयकी भी उत्कृष्ट स्थितिके अभावका प्रसंग आता है ।

उसके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ।।२४०।।

यह सूत्र सुगम हैं ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी, उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट चार स्थानोंमें पतित है ।। २४१ ।।

ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बाँधते समय यदि आयुकर्मका भी पूर्वकोटिके त्रिभागके प्रथम समयमें उत्कृष्ट बन्ध होता है तो ज्ञानावरणीयकी स्थितिके साथ आयुकी स्थिति भी उत्कृष्ट होती हैं । इसके विपरीत वह अनुत्कृष्ट होकर चार स्थानोंमें पतित होती है । यथा–ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके द्वारा एक समय कम दो समय कम इत्यादि क्रमसे पूर्वकोटिके त्रिभागसे अधिक तेत्तीस सागरोपमोंकी उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उनमें एक खण्ड मात्र तक हीन होकर आयुके वाँधनेपर असंख्यातभागहानि होती है । वहाँसे लेकर आयुकी

प्पहुडि आउअस्स संखेज्जभागहाणी होदूण गच्छदि जाव उक्कस्सट्ठिदीए दुभागबंधो त्ति।तत्तो प्पहुडि संखेज्जगुणहाणी होदि जाव णाणावरणीयउक्कस्सट्ठिदीए सह आउअस्स उक्कस्सट्ठिदिं जहण्णपरित्तासंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तआउट्ठिदी[1] पबद्धा त्ति । तत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणी होदूण गच्छदि जाव तप्पाओग्गअंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदि त्ति । कधं णाणावरणीयउक्कस्सट्ठिदिपाओग्गपरिणामेहि आउअस्स चउट्ठाणपदिदो बंधो जायदे ? ण एस दोसो, णाणावरणीयउक्कस्सट्ठिदिबंधपाओग्गपरिणामेसु वि अंतोमुहुत्तमेत्त-आउट्ठिदिबंधपाओग्गपरिणामाणं संभवादो । कधमेगो परिणामो भिण्णकज्जकारओ ? ण, सहकारिकारणसंबंधभेएण तस्स तदविरोहादो ।

एव छण्णं कम्माणं आउववज्जाणं ।। २४२ ।।

जहा णाणावरणीए णिरुद्धे सेसकम्माणं सण्णियासो कओ तहा सेसछकम्माणमाउ-अवज्जाणं कायव्वं, विसेसाभावादो ।

जस्स आउअवेयणा कालदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? ।। २४३ ।।

सुगमं ।

....

संख्यातभाग हानि होकर उत्कृष्ट स्थितिके द्वितीय भागका बन्ध होने तक जाती है । वहाँसे लेकर ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ आयुकी उत्कृष्ट स्थितिको जघन्य परीतासंख्यातसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड प्रमाण आयुकी स्थितिके बाँधने तक संख्यातगुणहानि होती है । वहाँ से लेकर तत्प्रायोग्य अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति तक असंख्यातगुणहानि होकर जाती है ।

शंका – ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितियोग्य परिणामोंके द्वारा आयु कर्मका चतु:स्थान पतित बन्ध कैसे होता है ?

समाधान – यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, ज्ञानावरणीयकी उत्कृष्ट स्थितिके बन्धयोग्य परिणामोंमें भी अन्तर्मुहूर्त मात्र आयु:स्थितिके बन्धयोग्य परिणाम सम्भव है ।

शंका – एक परिणाम भिन्न कार्योंका करनेवाला कैसे होता है ?

समाधान – नहीं, क्योंकि, सहकारी कारणोंके सम्बन्धभेदसे उसके भिन्न कार्योंके करनेमें कोई विरोध नहीं है ।

इसी प्रकार शेष छह कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।। २४२ ।।

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयकी विवक्षामें शेष कर्मोंके संनिकर्षकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार आयुको छोडकर शेष छह कर्मोंके संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके आयुकी वेदना कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ।। २४३ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

....

(१) अ-ताप्रत्यो: 'आउट्ठिदीए', इति पाठः ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा तिट्ठाणपदिदा।। २४४ ।।

पुव्वकोडितिभागे उक्कस्साउट्ठिदिं बंधमाणेण जदि णाणावरणीयादिसत्तण्णं कम्माण-मुक्कस्सट्ठिदी पबद्धा तो आउएण सह सेससत्तण्णं कम्माणं पि उक्कस्सट्ठिदी होदि । अण्णहा अणुक्कस्सा होदूण तिट्ठाणपदिदा होदि । पज्जवणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि-

असंखेज्जभागहीणा वा संखेज्जभागहीणा वा संखेज्जगुणहीणा वा ।। २४५ ।।

तं जहा- पुव्वकोडितिभागम्मि उक्कस्साउअट्ठिदिं बंधमाणेण सत्तण्णं कम्माणं समऊणुक्कस्सट्ठिदीए बद्धाए असंखेज्जभागहाणी होदि । दुसमऊणाए पबद्धाए वि असंखेज्जभागहाणी चेव होदि । एवमसंखेज्जभागहाणी होदूण ताव गच्छदि जाव सत्तण्णं कम्माणं सग-सगुक्कस्सट्ठिदीओ उक्कस्ससंखेज्जेण खंडेदूण तत्थ एगखंडेण[1] परिहाइदूण बंधंति । तदो प्पहुडि हेट्ठिमट्ठिदीसु आउअस्स उक्कस्सट्ठिदीए सह बंधमाणासु[2] संखेज्जभागहाणी होदि जाव उक्कस्सट्ठिदीए अद्धमेत्तं बद्धं ति । तदो प्पहुडि हेट्ठिमट्ठिदीओ आउअस्स उक्कस्सट्ठिदीए सह बंधमाणस्स[3] संखेज्जगुणहाणी होदि जाव तप्पाओग्गअंतोकोडाकोडिट्ठिदि त्ति ।

....

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी । उत्कृष्टकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट तीन स्थानोंमें पतित है ।। २४४ ।।

पूर्वकोटिके त्रिभागमें आयुकी उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके द्वारा यदि ज्ञानावरणीयादिक आठ कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति बाँधी गई तो आयुके साथ शेष सात कर्मोंकी भी उत्कृष्ट स्थिति होती है । इसके विपरीत वह अनुत्कृष्ट होकर तीन स्थानोंमें पतित होती है । अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं ।

उक्त वेदना असंख्यातभागहीन, संख्यातभागहीन, अथवा संख्यातगुणहीन होती है।। २४५ ।।

वह इस प्रकारसे-पूर्वकोटिके त्रिभागमें आयु की उत्कृष्ट स्थितिको बाँधनेवाले जीवके द्वारा सात कर्मोंकी एक समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बाँधे जानेपर असंख्यातभागहानि होती है । दो समय कम उत्कृष्ट स्थितिके बाँधे जानेपर भी असंख्यातभागहानि ही होती है । इस प्रकार असंख्यातभागहानि होकर तब तक जाती है जब तक सात कर्मोंकी अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितियोंका उत्कृष्ट संख्यातसे खण्डित कर उनमेंसे एक खण्डसे हीन होकर बाँधी जाती हैं । यहांसे लेकर आयुकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ अधस्तन स्थितियोंको बाँधनेपर उत्कृष्ट स्थितिके अर्ध भागको बाँधने तक संख्यातभागहानि होती है । यहाँसे लेकर अधस्तन स्थितियोंको आयुकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ बाँधनेवाले जीवके तत्प्रायोग्य अन्त:कोडाकोडि प्रमाण स्थिति तक संख्यातगुणहानि होती है ।

....

(१) प्रतिषु 'एगखंडे परिहाइदूण बध्दंती' इति पाठः । (२) प्रतिषु 'बद्धमाणासु' इति पाठः ।
(३) प्रतिषु 'बद्धमाणस्स' इति पाठः ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स दंसणावरणीय-मोहनीय-अंतराइयवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? ॥२४६॥

सुगमं ।

उक्कस्सा वा अणुक्कस्सा वा, उक्कस्सादो अणुक्कस्सा छट्ठाण-पदिदा ॥ २४७ ॥

णाणावरणीयभावमुक्कस्सं बंधमाणेण जदि सेसघादिकम्माणुक्कस्सभावो पबद्धो तो उक्कस्सा भाववेयणा होदि । अह ण[1] बद्धो अणुक्कस्सा होदूण अणंतभागहीण -असंखेज्ज-भागहीण-संखेज्जभागहीण-संखेज्जगुणहीण-असंखेज्जगुणहीण-अणंतगुणहीणसरूवेण छट्ठाणपदिदा होदि । कधमेक्केण परिणामेण बज्झमाणाणं भेयो ? ण, विसेसपच्चयभेएण तेसिं पि भेदुप्पत्तीदो ।

तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? ॥ २४८ ॥

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ॥ २४९ ॥

....

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है अथवा अनुत्कृष्ट ? ॥ २४६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह उत्कृष्ट भी होती है और अनुत्कृष्ट भी । उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट छह स्थानोंमें पतित है ॥ २४७ ॥

ज्ञानावरणीयके उत्कृष्ट भावको बाँधनेवाले जीवके द्वारा यदि शेष घातिकर्मोंका उत्कृष्ट भाव बाँधा गया है तो उनकी उत्कृष्ट भाववेदना होती है । परन्तु यदि उनका उत्कृष्टभाव नहीं बाँधा गया है तो वह अनुत्कृष्ट होकर अनन्तभागहीन, असंख्यातभागहीन, संख्यातगुणहीन, असंख्यातगुणहीन और अनन्तगुणहीन स्वरूपसे छह स्थानोंमें पतित होती है ।

शंका - एक परिणामसे बाँधे जानेवाले भावोंके भेदकी सम्भावना कैसे हो सकती है ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, विशेष प्रत्ययोंके भेदसे उनके भी भेदकी उत्पत्ति सम्भव है ।

उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ॥ २४८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ॥ २४९ ॥

....

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'जहण्ण', इति पाठः ।

तं जहा–सण्णिपंचिंदियपज्जत्तसव्वसंकिलिट्ठमिच्छाइट्ठीसु णाणावरणीयभावो उक्कस्सो होदि । आउअभावो पुण पमत्तापमत्तसंजदप्पहुडि जाव उवसंतकसाओ त्ति ताव उक्कस्सो होदि वेमाणियदेवेसु च । सेस[1] अघादिकम्माणं सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदप्पहुडि उवरि उक्कस्सभावो होदि । ण च मिच्छाइट्ठीसु अघादिकम्माणमुक्कस्सभावो अत्थि, सम्माइट्ठीसु णियमिदउक्कस्साणुभागस्स मिच्छाइट्ठीसु संभवविरोहादो । तेण अघादिकम्माणमणुभागो अणंतगुणहीणो ।

एवं दंसणावरणीय–मोहणीय–अंतराइयाणं ।। २५० ।।

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो कदो तहा सेसतिण्णं घादिकम्माणं कायव्वो, अविसेसादो ।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स णाणावरणीय–दंसणावरणीय–अंतराइयवेयणा भावदो सिया अत्थि सिया णत्थि ।।२५१।।

सुहुमसांपराइय–खीणकसाएसु अत्थि, तत्थ तदाधारपोग्गलुवलंभादो । उवरि णत्थि, तेसु संतेसु केवलित्तविरोहादो ।

जदिं अत्थि भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? ।। २५२ ।।

....

वह इस प्रकारसे–संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त व सर्वसंक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीवोंमें ज्ञानावरणीयका भाव उत्कृष्ट होता है, परन्तु आयु कर्मका भाव प्रमत्त व अप्रमत्तसंयतसे लेकर उपशान्तकषाय तक उत्कृष्ट होता है, तथा वैमानिक देवोंमें भी वह उत्कृष्ट होता है । शेष तीन अघाति कर्मोंका उत्कृष्ट भाव सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयतसे लेकर आगे होता है । मिथ्यादृष्टि जीवोंमें अघाति कर्मोंका उत्कृष्ट भाव सम्भव नहीं है, क्योंकि, सम्यग्दृष्टि जीवोमें नियमसे पाये जानेवाले अघाति कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागके मिथ्यादृष्टि जीवोंमें होनेका विरोध है । इस कारण अघाति कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा हीन है ।

इसी प्रकार दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायके संनिकर्षकी प्ररूपणा करना चाहिये ।। २५० ।।

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकार शेष तीन घाति कर्मोंका सनिकर्ष करना चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना भावकी अपेक्षा कथंचित् होती है व कथंचित् नहीं होती है ।। २५१ ।।

उक्त तीन घाति कर्मोंकी वेदना सूक्ष्मसाम्परायिक और क्षीणकषाय गुणस्थानोंमें है, क्योंकि, वहाँ उनके आधारभूत पुद्‌गल पाये जाते हैं । आगे उनकी वेदना नहीं है, क्योंकि, उक्त तीन कर्मोंके होनेपर केवली होनेका विरोध है ।

यदि है तो वह भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट है या अनुत्कृष्ट ? ।। २५२ ।।

....

(१) ताप्रतौ 'होदि । वेमाणियदेवेसु च सेस–', इति पाठः । ताप्रतौ 'सांपराइसुद्धि–' इति पाठः ।

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ।। २५३ ।।

अणुक्कस्सत्तमणेयविहमिदि[1] अणप्पिदाणुक्कस्सपडिसेहट्ठमणंतगुणहीणमिदि भणिदं। किमट्ठमणंतगुणहीणत्तं ? खवगपरिणामेहि पत्तघादत्तादो ।

तस्स मोहणीयवेयणा भावदो णत्थि ।। २५४ ।।

सुहुमसांपराइयचरिमसमए वेयणीयस्स उक्कस्साणुभागबंधो जादो । ण च सुहुम-सांपराइए मोहणीयभाबो णत्थि, भावेण विणा दव्वकम्मस्स अत्थित्तविरोहादो सुहुम-सांपराइयसण्णाणुवत्तीदो वा । तम्हा मोहणीयवेयणा भावविसया णत्थि त्ति ण जुज्जदे ? एत्थ परिहारो उच्चदे । तं जहा- विणासविसए दोण्णि णया होंति उप्पादाणुच्छेदो अणुप्पादाणुच्छेदो चेदि । तत्थ उप्पादाणुच्छेदो णाम दव्वट्ठियो । तेण संतावत्थाए चेव विणासमिच्छदि, असंते बुद्धिविसयं चाइक्कंतभावेण [2]वयणगोयराइक्कंते अभाववव्वहा-राणुववत्तीदो । ण च अभावो णाम अत्थि, तप्परिच्छिंदंतपमाणाभावादो, [3]संतविसयाणं

....

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनन्तगुणी हीन होती है ।।२५३।।

अनुत्कृष्टता चूँकि अनेक प्रकार की है, अतएव अविवक्षित अनुत्कृष्टताका प्रतिषेध करनेके लिये 'अनन्तगुणी हीन' ऐसा कहा है ।

शंका – अनंतगुणहीनता किसलिये है ?

समाधान – क्षपक परिणामों द्वारा घातको प्रप्त होनेके कारण वह अनन्तगुणी हीन होती है ऐसा कहा है ।

उक्त जीवके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा नहीं होती है ।। २५४ ।।

शंका – सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें वेदनीयका अनुभागबन्ध उत्कृष्ट हो जाता है । परन्तु उस सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें मोहनीयका भाव नहीं हो, ऐसा सम्भव नहीं है, क्योंकि, भावके बिना द्रव्य कर्मके रहनेका विरोध है, अथवा वहाँ भावके बिना 'सूक्ष्मसाम्परायिक' यह संज्ञा संज्ञा ही नहीं बनती है । इस कारण मोहनीयकी भावविषयक वेदना नहीं है, यह कहना उचित नहीं है ?

समाधान – यहाँ इस शंकाका परिहार कहते हैं । वह इस प्रकार है – विनाशके विषयमें दो नय हैं उत्पादानुच्छेद और अनुत्पादानुच्छेद । उत्पादानुच्छेदका अर्थ द्रव्यार्थिक नय है । इसलिये वह सद्भावकी अवस्थामें ही विनाशको स्वीकार करता है, क्योंकि, असत् और बुद्धिविषयतासे अतिक्रान्त होनेके कारण वचनके अविषयभूत पदार्थमें अभावका व्यवहार नहीं बन सकता । दूसरी बात यह है कि अभाव नामका कोई स्वतन्त्र पदार्थ नहीं है, क्योंकि, उसके ग्राहक प्रमाणका अभाव है । कारण कि सत्‌को विषय करनेवाले प्रमाणोंके असत् में प्रवृत्त होनेका विरोध हैं ।

....

(१) अ–आ–काप्रतिषु '–मणेणविह', इति पाठः ।

(२) मप्रतिपाठोऽयम् । अ–आ–का–ता प्रतिषु 'णयण' इति पाठः । (३) अ–आ–काप्रतिषु 'सत्त' इति पाठः ।

पमाणाणमसंते वावारबिरोहादो । अविरोहे वा गद्दहसिंगं पि पमाणविसयं होज्ज । ण च एवं, अणुवलंभादो । तम्हा भावो चेव अभावो त्ति सिद्धं ।

अणुप्पादाणुच्छेदो णाम पज्जवट्ठिओ णयो । तेण असंतावत्थाए अभाववव‌एस-मिच्छदि, भावे उवलब्भमाणे अभावत्तविरोहादो । ण च पडिसेहविसओ भावा भावत्तमल्लियइ, पडिसेहस्स फलाभावप्पसंगादो । ण च विणासो णत्थि, [1] घडियादीणं [2]सव्वद्धमवट्ठाणाणु-वलंभादो । ण च भावो अभावो होदि, भावाभावाणमण्णोण्णविरुद्धाणमेयत्तविरोहादो । एत्थ जेण दव्वट्ठियणयो उप्पादाणुच्छेदो अवलंबिदो तेण मोहणीयभाववेयणा णत्थि त्ति भणिदं । पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे मोहणीयभाववेयणा अणंतगुणहीणा होदूण अत्थि त्ति वत्तव्वं ।

तस्स आउअवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ?।।२५५।।

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ।। २५६ ।।

जेण आउअस्स उक्कस्सभाववेयणा अप्पमत्तसंजदेण बद्धदेवाउअम्मि होदि । ण च

....

अथवा, असत्‌के विषयमें उनकी प्रवृत्तिका विरोध न माननेपर गधेका सींग भी प्रमाण का विषय होना चाहिये । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, वह पाया नहीं जाता । इस कारण भाव स्वरूप ही अभाव है, यह सिद्ध होता है ।

अनुत्पादानुच्छेदका अर्थ पर्यायार्थिक नय है । इसी कारण वह असत् अवस्थामें अभाव संज्ञाको स्वीकार करता है, क्योंकि, इस नयकी दृष्टिमें भावकी उपलब्धि होनेपर अभावरूपताका विरोध है । और प्रतिषेधका विषयभूत भाव भावस्वरूपताको प्राप्त नहीं हो सकता, क्योंकि, ऐसा होनेपर प्रतिषेधके निष्फल होनेका प्रसंग आता है । विनाश नहीं है, यह भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि, घटिका (छोटा घडा) आदिकोंका सर्वकाल अवस्थान नहीं पाया जाता । यदि कहा जाय कि भाव ही अभाव है (भावको छोडकर तुच्छ अभाव नहीं है) तो यह भी कहना ठीक नहीं है, क्योंकि, भाव और अभाव ये दोनों परस्पर विरुद्ध हैं, अतएव उनके एक होनेका विरोध है । यहाँ चूँकि द्रव्यार्थिक नय स्वरूप उत्पादानुच्छेदका अवलम्बन किया गया है, अतएव 'मोहनीय कर्मकी भाववेदना यहाँ नहीं है' ऐसा कहा गया है । परन्तु यदि पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन किया जाय तो मोहनीयकी भाववेदना अनन्तगुणी हीन होकर यहाँ विद्यमान है ऐसा कहना चाहिये ।

उसके आयु कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ।। २५५ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट होकर अनन्तगुणी हीन होती है ।। २५६ ।।

इसका कारण यह है कि आयुकी उत्कृष्ट भाववेदना अप्रमत्तसंयतके द्वारा बाँधी गई देवायु में

....

(१) प्रतिषु 'घादियादीणं', इति पाठः । (२) अ-आ-काप्रतिषु 'सव्वत्थमव-', ताप्रतौ 'सव्वत्थ अव-' इति पाठः ।

खवगसेडिम्मि देवाउअमत्थि, बद्धाउआणं खवगसेडिसमारोहाभावादो । अत्थि च मणुस्साउअं, ण तस्साणुभागो उक्कस्सो होदि, असंजदसम्मादिट्ठिणा मिच्छादिट्ठिणा वा बद्धस्स देवाउअं पेक्खिदूण अप्पसत्थस्स उक्कस्सत्तविरोहादो । तेण अणंतगुणहीणा ।

तस्स णामा-गोदवेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? ।।२५७।।

सुगमं ।

उक्कस्सा ।। २५८ ।।

सुहुमसांपराइयम्मि सव्वुक्कस्सविसोहीहि तिण्णं पि उक्कस्सबंधुवलंभादो ।

एवं णामा-गोदाणं ।। २५९ ।।

जहा वेयणीयस्स सण्णियासो कदो तहा णामा-गोदाणं पि कायव्वो, विसेसाभावादो।

जस्स आउअवेयणा भावदो उक्कस्सा तस्स सत्तण्णं कम्माण-वेयणा भावदो किमुक्कस्सा अणुक्कस्सा ? ।। २६० ।।

सुगमं ।

णियमा अणुक्कस्सा अणंतगुणहीणा ।। २६१ ।।

....

होती है । परन्तु क्षपकश्रेणिमें देवायु है नहीं, क्योंकि, बद्धायुष्क जीवोंका क्षपक श्रेणिपर चढना सम्भव नहीं है । क्षपकश्रेणिमें मनुष्यायु अवश्य है, परन्तु उसका अनुभाग उत्कृष्ट नहीं होता, क्योंकि, असंगत सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टिके द्वारा बाँधी गई मनुष्यायु चूँकि देवायुकी अपेक्षा अप्रशस्त है, अतएव उसके उत्कृष्ट होनेका विरोध है । इसी कारण वह अनन्तगुणी हीन है ।

उसके नाम व गोत्र कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ।।२५७।।

यह सूत्र सुगम है ।

उत्कृष्ट होती है ।। २५८ ।।

कारण कि सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानमें सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिके द्वारा तीनों ही कर्मोंका उत्कृष्ट बन्ध पाया जाता है ।

इसी प्रकार नाम और गोत्र कर्मकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।। २५९ ।।

जिस प्रकारसे वेदनीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे नाम व गोत्र कर्मके भी संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके आयुकी वेदना भावकी अपेक्षा उत्कृष्ट होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या उत्कृष्ट होती है या अनुत्कृष्ट ? ।। २६० ।।

यह सुत्र सुगम है ।

वह नियमसे अनुत्कृष्ट अनंतगुणहीन होती है ।। २६१ ।।

कुदो ? अप्पमत्तसंजदप्पहुडि उवरिमसंजदेसु पमत्तसंजदेसु वेमाणियदेवेसु च आउअस्स उक्कस्सभावुवलंभादो । ण च एदेसु घादिकम्माणमुक्कस्साणुभागो अत्थि, विसोहीए घादं पाविदूण अणंतगुणहीणत्तमुवगयाणमुक्कस्सत्तविरोहादो । ण च तिण्णमघादिकम्माण-मुक्कस्सओ अणुभागो अत्थि, तस्स खीणकसायादिसु चेव संभवादो । ण च खीणकसाया-दिसु आउअस्स उक्कस्सभावो अत्थि, खवगसेडिम्मि देवाउअस्स संताभावादो[1] । तम्हा अणंतगुणहीणत्तं सिद्धं । एवमुक्कस्सओ परत्थाणवेयणासण्णियासो समत्तो ।

जो सो थप्पो जहण्णओ परत्थाणवेयणासण्णियासो सो चउव्विहो-दव्वदो खेत्तदो कालदो भावदो चेदि ।। २६२ ।।

जहण्णवेयणसण्णियासो चउव्विहो चेव, दव्वट्ठियणयावलंबणादो । पज्जवट्ठियणए पुण अवलंबिज्जमाणे पण्णारसविहो होदि । सो जाणिय वत्तव्वो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। २६३ ।।

सुगमं ।

....

कारण यह कि अप्रमत्तसंयतसे लेकर आगेके संयत जीवोंमें, प्रमत्तसंयतोंमें और वैमानिक देवोंमें आयुका उत्कृष्ट अनुभाग पाया जाता है । परन्तु इन जीवोंमें घाति कर्मोंका उत्कृष्ट अनुभाग नहीं है, क्योंकि, विशुद्धि द्वारा घातको प्राप्त होकर अनन्तगुणी हीनताको प्राप्त हुए उनके उत्कृष्ट होनेका विरोध है । तीन अघाति कर्मोंका भी उनमें उत्कृष्ट अनुभाग सम्भव नहीं है, क्योंकि, वह क्षीणकषाय आदि जीवोंमें ही सम्भव है । परन्तु क्षीणकषाय आदि जीवोंमें आयुका उत्कृष्ट भाव सम्भव नहीं है, क्योंकि, क्षपकश्रेणिमें देवायुके सत्त्वका अभाव है । इस कारण उक्त सात कर्मोंकी भाववेदनाकी अनन्तगुणहीनता सिद्ध है । इस प्रकार उत्कृष्ट परस्थान वेदनासंनिकर्ष समाप्त हुआ ।

जो जघन्य परस्थान वेदनासंनिकर्ष स्थगित किया गया था वह द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षासे चार प्रकारका है ।। २६२ ।।

जघन्य वेदनासंन्निकर्ष चार प्रकारका ही है, क्योंकि, द्रव्यार्थिक नयका अवलम्बन है । परन्तु पर्यायार्थिक नयका अवलम्बन करनेपर वह पन्द्रह प्रकारका है (प्रत्येक भंग ४, द्वि.सं.६, त्रि.सं.४, च.सं.१; ४ + ६ + ४ + १ = १५) । उसकी जानकर प्ररूपणा करनी चाहिये ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। २६३ ।।

यह सूत्र सुगम हैं ।

....

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'संतभावादो', ताप्रतौ 'संत (ता) भावादो' इति पाठः ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णादो बिट्ठाण-पदिदा ॥ २६४ ॥

सुद्धणयविसयखविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण खीणकसायचरिमसमए ट्ठिदस्स णाणावरणीयदव्ववेयणाए सह दंसणावरणीय-अंतराइयाणं च दव्ववेयणा जहण्णा होदि । अध अण्णहा जइ आगदो होज्ज तो अजहण्णा होदूण दुट्ठाणपदिदा । संपहि पज्जवट्ठियण-याणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि-

अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा ॥ २६५ ॥

णाणावरणीयस्स जहण्णदव्वे संते जदि एगो परमाणू दंसणावरणीय-अंतराइयाणं दव्वेसु अहियो होज्ज तो अणंतभागब्भहियं दव्वं होदि । एदमादिं कादूण परमाणुत्त-रादिकमेण ताव अणंतभागवड्ढी गच्छदि जाव जहण्णदव्वमुक्कस्सअसंखेज्जेण खंडिदूण तत्थ एगखंडमेत्तं वड्ढिदं ति। तदो प्पहुडि परमाणुत्तरादिकमेण असंखेज्जभागवड्ढी होदूण गच्छदि जाव जहण्णदव्वं तप्पाओग्गेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं वड्ढिदं ति । उवरिमवड्ढीओ एत्थ किण्ण भण्णंति[1] ? ण, खविदकम्मंसिए जदि सुट्ठु बहुगी दव्ववड्ढी होदि तो एगसमयपबद्धमेत्ता चेव होदि त्ति गुरूवएसादो ।

....

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यसे अजघन्य दो स्थानोंमें पतित होती है ॥ २६४ ॥

शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर क्षीणकषायके अन्तिम समयमें स्थित हुए जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदनाके साथ दर्शनावरणीय और अन्तरायकी द्रव्यवेदना जघन्य होती है । अथवा यदि अन्य स्वरूपसे आया है तो उक्त दोनों कर्मोंकी द्रव्यवेदना अजघन्य होकर दो स्थानोंमें पतित होती है । अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं -

वह अजघन्य वेदना अनन्तभाग अधिक और असंख्यात भाग अधिक होती है ॥२६५॥

ज्ञानावरणीयके द्रव्यके जघन्य होनेपर यदि एक परमाणु दर्शनावरणीय और अन्तरायके द्रव्योंमें अधिक होता है तो अनन्तभाग अधिक द्रव्य होता है । इससे लेकर एक एक परमाणु आदिके क्रमसे तब तक अनन्तभागवृद्धि जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड मात्र वृद्धिको प्राप्त होता है । पश्चात् इससे लेकर एक एक परमाणु आदिके क्रमसे जघन्य द्रव्यको तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड मात्र वृद्धिके होने तक असंख्यातभागवृद्धि होकर जाती है ।

शंका - आगेकी वृद्धियाँ यहाँ क्यों नहीं कही गई हैं ?

समाधान - नहीं, क्योंकि, क्षपितकर्मांशिकके यदि बहुत अधिक द्रव्यकी वृद्धि होती है तो वह एक समयप्रबद्ध प्रमाण ही होती है, ऐसा गुरुका उपदेश है ।

....

(१) प्रतिषु 'भणंति', इति पाठः ।

खविदघोलमाणमस्सिदूण किमिदि ण वड्ढाविज्जदे ? ण एस दोसो, णाणावरणीयस्स जहण्णदव्वाभावेण पयदपरूवणाए विरोहप्पसंगादो ।

तस्स वेयणीय-णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। २६६ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जभागब्भहिया ।। २६७ ।।

सजोगिकेवलिणा पुव्वकोडिकालेण असंखेज्जगुणाए सेडीए विणासिज्जमाणदव्वस्स अविणासादो । तस्स अहियदव्वस्स खीणकसायचरिमसमए वट्टमाणस्स को भागहारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

तस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णिया णत्थि ।। २६८ ।।

कुदो ? सुहुमसांपराइयचरिमसमए पुव्वं चेव विणट्ठत्तादो ।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। २६९ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ।। २७० ।।

णेरइयम्मि तेतीससागरोवमब्भंतर-असंखेज्जगुणहाणीयो गालिय दीवसिहागारेण

....

शंका – क्षपितघोलमात जीवका आश्रय करके वृद्धि क्यों नहीं करायी जाती हैं ?

समाधान – यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, उसके ज्ञानावरणीयके जघन्य द्रव्यका अभाव होनेसे प्रकृत प्ररूपणाके विरूद्ध होनेका प्रसंग आता है ।

उसके वेदनीय, नाम और गोत्रकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। २६६ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातवें भाग अधिक होती है ।। २६७ ।।

कारण कि सयोगिकेवलीके द्वारा (कुछ कम) पूर्वकोटि मात्र कालमें असंख्यातगुणित श्रेणिरूपसे निर्जीर्ण किये जानेवाले द्रव्यका पूर्णतया विनाश नहीं हुआ है ।

शंका – क्षीणकषायके अन्तिम समयमें वर्तमान उक्त अधिक द्रव्यका भागहार क्या है ?

समाधान – उसका भागहार पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग है ।

उसके मोहनीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ।। २६८ ।।

कारण कि वह पहले ही सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें नष्ट हो चुका है ।

उसके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।।२६९।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ।। २७० ।।

नारकी जीवके तेतीस सागरोपम कालके भीतर असंख्यातगुणहानियोंको गलाकर दीप-

ट्ठिददव्वमेगसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागो[1] जहण्णदव्ववेयणा[2] । एत्थ पुण पुव्वकोडि-कालब्भंतरे एगा वि गुणहाणी णत्थि, गुणहाणीए[3] असंखेज्जभागत्तादो । तेण आउअजहण्ण-दव्वादो खीणकसायचरिमसमयदव्वमसंखेज्जगुणं ति सिद्धं ।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ।। २७१ ।।

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो कदो तधा एदेसिं पि दोण्णं पयडीणं कायव्वो, विसेसाभावादो ।

जस्स वेयणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणा-वरणीय-मोहनीय-अंतराइयाणं वेयणा दव्वदो जहण्णिया णत्थि ।।२७२।।

कुदो ? छदुमत्थावत्थाए[4] चेव तिस्से विणट्ठत्तादो ।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।।२७३।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ।। २७४ ।।

....

शिखाके आकारसे जो द्रव्य स्थित है वह एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागमात्र जघन्य वेदना स्वरूप है । परन्तु यहाँ पूर्वकोटिकाल के भीतर एक भी गुणहानि नहीं है, क्योंकि, वहाँ गुणहानिका असंख्यातवाँ भाग ही है । इसलिये आयुके जघन्य द्रव्यसे क्षीणकषायका अन्तिम समयसम्बन्धी द्रव्य असंख्यातगुणा है, यह सिद्ध है ।

इसी प्रकारसे दर्शनावरणीय और अन्तरायकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।। २७१ ।।

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयका सन्निकर्ष किया गया है उसी प्रकार इन दोनों कर्मोंके सन्निकर्षका कथन करना चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ।।२७२।।

कारण कि उक्त कर्मोंकी वह वेदना छद्मस्थ अवस्थामें ही नष्ट हो चुकी है ।

उसके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।।२७३।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ।। २७४ ।।

....

(१) ताप्रतौ 'असंखेज्जभागो', इति पाठः । (२) आप्रतौ 'जहण्णदव्वहिया' इति पाठः । (३) अप्रतौ 'गुणहाणी अत्थि ण गुणहाणीए' इति पाठः । (४) अ-का-ताप्रतिषु 'छदुमत्थाए', आप्रतौ 'छदुमत्थत्थाए' इति पाठः ।

एदमजोगिचरिमसमयदव्वं उक्कस्सजोगेण बद्धएगसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभाग-मेत्तं[1] । कुदो णव्वदे ? जदा जदा आउअं बंधदि तदा तदा तप्पाओग्गेण उक्कस्सएण जोगेण बंधदि त्ति वयणादो णव्वदे । दीवसिहादव्वं पुण जहण्णजोगेण बद्धएगसमय-पबद्धस्स असंखेज्जदिभागमेत्तं होदि । तेण जहण्णाउअवेयणादो इमा असंखेज्जगुणा ।

तस्स णामा-गोदवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।।२७५।।

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा[2] बिट्ठाण-पदिदा ।। २७६ ।।

जदि सुद्धणयविसयखविदकम्मंसियलक्खणेणागदो तो वेयणीयदव्ववेयणाए सह णामा-गोदाणं दव्ववेयणा वि जहण्णा होदि । अह णागदो[3] तो अजहण्णा होदूण बिट्ठाणपदिदा होदि । पज्जवट्ठियणयाणुग्गहट्ठमुत्तरसुत्तं भणदि-

अणंतभागब्भहिया वा असंखेज्जभागब्भहिया वा ।। २७७ ।।

....

यह अयोगकेवलीका अन्तिम समय सम्बन्धी द्रव्य उत्कृष्ट योगसे बाँधे गये एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भाग मात्र है ।

शंका – वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान – वह 'जब जब आयुको बाँधता है तब तब तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट योगसे बाँधता है' इस वचनसे जाना जाता है ।

परन्तु दीपशिखा द्रव्य जघन्य योगसे बाँधे गये एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागमात्र होता है इस कारण आयुकी जघन्य वेदनासे यह वेदना असंख्यातगुणी है ।

उसके नाम और गोत्रकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। २७५ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी, जघन्यसे अजघन्य दो स्थानोंमें पतित होती है ।। २७६ ।।

यदि शुद्ध नयके विषयभूत क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आया है तो वेदनीयकी वेदनाके साथ नाम व गोत्रकी द्रव्यवेदना भी जघन्य होती है । परन्तु यदि उक्त स्वरूपसे नहीं आया है तो वह अजघन्य होकर दो स्थानोंमें पतित है । अब पर्यायार्थिक नयके अनुग्रहार्थ आगेका सूत्र कहते हैं ।

वह अनन्तभाग अधिक भी होती है और असंख्यातभाग अधिक भी होती है ।।२७७।।

....

(१) ताप्रतौ 'संखेज्जभागमेत्तं', इति पाठः । (२) अ-आ-काप्रतिषु 'अजहण्णादो' ताप्रतौ 'अजहण्णा (दो)' इति पाठः । (३) अ-आप्रत्योः 'जहण्णागदो', काप्रतौ 'जहणागदो', ताप्रतौ 'अहण्णागदो' इति पाठः ।

जहण्णदव्वस्सुवरि एगपरमाणुम्मि वड्डिदे अणंतभागवड्ढी होदि । एवं परमाणुत्तरादि- कमेण ताव अणंतभागवड्ढी गच्छदि जाव जहण्णदव्वमुक्कस्सअसंखेज्जेण खंडिदूण तत्थेगखंडमेत्तं वड्डिदं ति । तदो प्पहुडि परमाणुत्तरादिकमेण असंखेज्जभागवड्ढी ताव गच्छदि जाव जहण्णदव्वं तप्पाओग्गेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेण खंडिय तत्थ एगखंडमेत्तं जहण्णदव्वस्सुवरि वड्डिदं ति ।

एवं-णामा-गोदाणं ॥ २७८ ॥

जहा वेयणीयस्स सण्णियासो कओ तहा णामा-गोदाणं पि सण्णियासो कायव्वो, विसेसाभावादो ।

जस्स मोहणीयवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणमा- उअवज्जाणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥ २७९ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जभागब्भहिया ॥ २८० ॥

कुदो ? उवरि विणासिज्जमाणदव्वेण अहियत्तादो । तस्स अहियदव्वस्स को पडिभागो? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

तस्स आउअवेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥ २८१ ॥

....

जघन्य द्रव्यवेदनाके ऊपर एक परमाणुकी वृद्धि होनेपर अनन्तभागवृद्धि होती है । इस प्रकार एक एक परमाणु आदिके क्रमसे तब तक अनन्तभागवृद्धि जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट असंख्यातसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड मात्र वृद्धि होती है । तत्पश्चात् उससे लेकर एक एक परमाणु आदिके क्रमसे असंख्यातभागवृद्धि तब तक जाती है जब तक जघन्य द्रव्यको तत्प्रायोग्य पल्योपमके असंख्यातवें भागसे खण्डित कर उसमें एक खण्ड मात्र वृद्धि जघन्य द्रव्यके ऊपर होती है ।

इसी प्रकार नाम और गोत्रकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥ २७८ ॥

जिस प्रकार वेदनीयका सन्निकर्ष किया गया है उसी प्रकार नाम और गोत्रके संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिसके मोहनीयकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुको छोडकर छह कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥ २७९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातवें भाग अधिक होती है ॥ २८० ॥

कारण कि वह आगे नष्ट किये जानेवाले द्रव्यसे अधिक है। उस अधिक द्रव्यका प्रतिभाग क्या है ? उसका प्रतिभाग पल्योपमका असंख्यातवाँ भाग हैं ।

उसके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥२८१॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ।। २८२ ।।

एदं पि सुगमं, बहुसो अवगमिदत्थत्तादो ।

जस्स आउअवेयणा दव्वदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा दव्वदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। २८३ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा चउट्ठाणपदिदा ।। २८४ ।।

णेरइयो जेण पंचिंदियो सण्णिपज्जत्तो तेण एइंदियजोगादो एदस्स जोगो असंखेज्जगुणो । तेणेव कारणेण एइंदियएगसमयपबद्धदव्वादो एदस्स[1] एगसमयपबद्धदव्वमसंखेज्जगुणं । तेण दीवसिहापढमसमयदव्वेण सत्तण्णं पि कम्माणं दिवड्ढगुणहाणिपमाण[2]-पंचिंदियसमयपबद्धमेत्तेण होदव्वं । तदो सग-सगजहण्णदव्वं पेक्खिदूण एत्थतणदव्वेण असंखेज्जगुणेणेव होदव्वं । तेण चउट्ठाणपदिदा त्ति ण घडदे ? एत्थ परिहारो वुच्चदे । तं जहा- खविदकम्मंसियलक्खणेण आगंतूण विवरीदं गंतूण[3] जहण्णजोगेण जहण्णबंधगद्धाए च णिरयाउअं बंधिय सत्तमपुढविणेरइएसु उववज्जिय छहि पज्जत्तीहि पज्ज-

....

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ।। २८२ ।।

यह सूत्र भी सुगम है, क्योंकि, इसके अर्थका परिज्ञान बहुत बार कराया जा चुका है ।

जिस जीवके आयुकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना द्रव्यकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। २८३ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य चार स्थानोंमें पतित होती है ।। २८४ ।।

शंका – चूँकि नारकी जीव पंचेन्द्रिय, संज्ञी व पर्याप्त है, अतएव एकेन्द्रिय जीवके योगकी अपेक्षा इसका योग असंख्यातगुणा हैं । और इसी कारणसे एकेन्द्रिय जीवके एक समयप्रबद्धके द्रव्यकी अपेक्षा इसके एक समयप्रबद्धका द्रव्य असंख्यातगुणा है । इसलिये दीपशिखाका प्रथम समयका द्रव्य 'सातों ही कर्मोंका डेढ गुणहानिमात्र पंचेन्द्रियके समयप्रबद्ध' प्रमाण होना चाहिये । अतएव अपने अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा यहाँका द्रव्य असंख्यातगुणा ही होगा । ऐसी अवस्थामें सूत्रमें 'चतु:स्थान पतित बतलाना घटित नहीं होता ?

समाधान – यहाँ इस शंकाका परिहार कहते हैं । वह इस प्रकार है – क्षपितकर्मांशिक स्वरूपसे आकर विपरीत स्वरूपको प्राप्त हो जघन्य योगसे और जघन्य बन्धककालसे नारकायुको बाँधकर सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हो छह पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको

....

(१) आप्रतौ 'एगसमयपबद्धत्तादो दव्वादो एगस्स', इति पाठः । (२) ताप्रतौ 'पमाणं' इति पाठः ।

(३) ताप्रतौ नोपलभ्यते पदमेतत् ।

त्तयदो होदूण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं घेत्तूण दिवड्ढमेत्तएइंदियसमयपबद्धे[1] ओकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडेदूण तत्थ एगखंडमेत्तदव्वमोकड्डदि । एवमोकड्डिदूण उदयावलियबाहिरट्ठिदीए वट्टमाणकाले बज्झमाणएगसमयपबद्धस्स पढमणिसेगादो असंखेज्जगुणं णिसिंचदि । तत्तो प्पहुडि उवरि विसेसहीणं णिसिंचदि जाव ओकड्डिदसमयपबद्धा णिट्ठिदा त्ति । एवं समयं पडि ओकड्डिदूण णिसेगरचणाए कीरमाणाए पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तेण कालेण उदयगदगोवुच्छा असंखेज्जदिभागहीणएगपंचिंदियसमयपबद्धमेत्ता होदि, सव्वत्थ भुजगारकालपमाणस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागुवलंभादो । तेण समयं पडि वयादो आयो[2] असंखेज्जभागब्भहियो । एदेण कमेण तेत्तीससागरोवमेसु संचयं करिय दीवसिहापढमसमए ट्ठिदस्स सत्तकम्मदव्वं सगजहण्णदव्वादो असंखेज्जदिभागब्भहियं होदि । ण च ओकड्डिददव्वस्स पढमणिसेयो बज्झमाणसमयपबद्धस्स पढमणिसेगेण सरिसो, तत्तो असंखेज्जगुणस्सेव संभवुवलंभादो । तं जहा–ओकड्डणाए णिसिंचमाणदव्वस्स पढमणिसेगो एगमेइंदियसमयपबद्धमोकड्डुक्कड्डणभागहारेण खंडिदमेत्तो होदि । एसो वि [3]बद्धपढमणिसेगादो असंखेज्जगुणो त्ति । तेण एगगुणहाणीए असंखेज्जदिभागे चेव अदिक्कंते उदयगदगोपुच्छा एगपंचिंदियसमयपबद्धमेत्ता होदि । जदि एगपंचिंदियसमयपबद्धस्स संखेज्जदिभागेण उदयगदगोवुच्छा

....

ग्रहण करके डेढ गुणहानि प्रमाण एकेन्द्रियके समयप्रबद्धोंको अपकर्षण–उत्कर्षणभागहारसे खण्डित कर उसमेंसे एक खण्ड मात्र द्रव्यका अपकर्षण करता है । इस प्रकार अपकर्षित करके उदयावलिके बाहिर स्थितिमें वर्तमानकालमें बाँधें जानेवाले एक समयप्रबद्धके प्रथम निषेकसे असंख्यातगुणा देता है । उससे लेकर आगे अपकर्षित समयप्रबद्धोंके समाप्त होने तक विशेषहीन देता है । इस प्रकार प्रत्येक समयमें अपकर्षित कर निषेकरचना करनेपर पल्योपमके असंख्यातवें कालमें उदयप्राप्त गोपुच्छ असंख्यातवें भागसे हीन एक पंचेन्द्रियके समयप्रबद्धके बराबर होती है, क्योंकि, सर्वत्र भुजाकारबन्धके कालका प्रमाण पल्योपमके असंख्यातवें भाग पाया जाता है । इसलिये प्रत्येक समयमें व्ययकी अपेक्षा आय असंख्यातवें भागसे अधिक है । इस क्रमसे तेतीस सागरोपमोंमें संचय करके दीपशिखाके प्रथम समयमें स्थित जीवके सात कर्मोंका द्रव्य अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा असंख्यातवें भागसे अधिक होता है । अपकर्षित द्रव्यका प्रथम निषेक बाँधे जानेवाले समयप्रबद्धके प्रथम निषेकके सदृश भी नहीं होता, क्योंकि, उसके उससे असंख्यातगुण होनेकी ही सम्भावना पायी जाती है । वह इस प्रकारसे– अपकर्षण द्वारा दिये जानेवाले द्रव्यका प्रथम निषेक एकेन्द्रियके एक समयप्रबद्धको अपकर्षण–उत्कर्षण भागहारसे खण्डित करनेपर जो लब्ध हो उतना होता है । यह भी बाँधे गये प्रथम निषेकसे असंख्यातगुणा हैं । इस कारण एक गुणहानिके असंख्यातवें भागके ही बीतनेपर उदयगत गोपुच्छा पंचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धके बराबर होती है । यदि उदयगत गोपुच्छा अपकर्षण–उत्कर्षण द्वारा पंचेन्द्रियके एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भागसे हीन होकर सर्वत्र नष्ट होती है तो दीपशिखा द्रव्य अपने

....

(१) ताप्रतौ 'उकड्डुक्कड्डुण', इति पाठः । (२) अ–आ–काप्रतिषु 'आदि', ताप्रतौ 'आदी' इति पाठः ।
(३) प्रतिषु 'बंध' इति पाठः ।

ओकड्डुक्कड्डणवसेण ऊणा होदूण सव्वत्थ गलदि तो दीवसिहादव्वं सगजहण्णदव्वादो संखेज्जभागब्भहियं होदि । अध एगपंचिंदियसमयपबद्धस्स संखेज्जभागमेत्तमुदयगदगोवुच्छपमाणं सव्वत्थ जदि होदि तो सगजहण्णदव्वादो दीवसिहादव्वं संखेज्जगुणं होदि । अध एगपंचिंदियसमयपबद्धस्स असंखेज्जदिभागमेत्तमोकड्डुक्कड्डणवसेण सव्वत्थ उदयगदगोवुच्छदव्वं होदि तो सगजहण्णदव्वादो असंखेज्जगुणं होदि । ण च सम्मादिट्ठिम्मि चेव एसो कमो, विसोहिबहुलेसु मिच्छाइट्ठीसु वि एवं चेव संजादे विरोहाभावादो । ओकड्डणाए एवंविहा णिज्जरा होदि त्ति कधं णव्वदे? चउट्ठाणपदिदसुत्तणिद्देसस्स अण्णहा अणुववत्तीदो । भुजगारप्पदरद्धासु[1] सुक्कंधारपक्खा इव सव्वजीवेसु वट्टमाणासु जेसिं जीवाणमप्पदरद्धादो भुजगारद्धा कमेण असंखेज्जभागब्भहिया संखेज्जभागब्भहिया संखेज्जगुणब्भहिया असंखेज्जगुणब्भहिया तेसिं दव्वं असंखेज्जभागब्भहियं संखेज्जभागब्भहियं संखेज्जगुणब्भहियं असंखेज्जगुणब्भहियं च कमेण होदि त्ति वुत्तं होदि ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा खेत्तदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा खेत्तदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। २८५ ।।

सुगमं ।

....

जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा संख्यातवें भागसे अधिक होता है । यदि उदयगत गोपुच्छाका प्रमाण सर्वत्र पंचेन्द्रिय सम्बन्धी एक समयप्रबद्धके संख्यातवें भागमात्र होता है तो दीपशिखाका द्रव्य अपने जघन्य द्रव्यकी अपेक्षा संख्यातगुणा होता है । यदि उदयगत गोपुच्छाका द्रव्य सर्वत्र अपकर्षण-उत्कर्षणके वश पंचेन्द्रिय सम्बन्धी एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागमात्र होता है तो वह अपने जघन्य द्रव्यसे असंख्यातगुणा होता है । यह क्रम केवल सम्यग्दृष्टि जीवके ही नहीं होता है, क्योंकि, अतिशय विशुद्धि युक्त मिथ्यादृष्टियोंमें भी ऐसा होनेमें कोई विरोध नहीं है ।

शंका – अपकर्षण द्वारा इस प्रकारकी निर्जरा होती है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान – चूँकि उसके बिना चतु:स्थान पतित सूत्रका निर्देश घटित नहीं होता, अत: इसीसे उक्त निर्जरा परिज्ञात होती है ।

सब जीवोंमें शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्षके समान भुजाकारकाल और अल्पतरकालके रहनेपर जिन जीवोंके अल्पतरकालकी अपेक्षा भुजाकारकाल क्रमसे असंख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातगुणा अधिक और असंख्यातगुणा अधिक होता है उनका द्रव्य क्रमसे असंख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातवें भागसे अधिक, संख्यातगुणा अधिक और असंख्यातगुणा अधिक होता है, यह उसका अभिप्राय है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना क्षेत्रकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। २८५ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

....

(१) अ-आ-काप्रतिषु 'भुजगारप्पदरत्थासु' ताप्रतौ 'भुजगारप्पदरत्था (सु)' इति पाठः ।

जहण्णा ॥ २८६ ॥

जहण्णोगाहणाए ट्ठिदणाणावरणीयखंधेहिंतो जीवदुवारेण सत्तण्णं कम्मक्खंधाणं भेदाभावादो ।

एवं सत्तण्णं कम्माणं ॥ २८७ ॥

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो परूविदो तहा सेसकम्माणं परूवेदव्वो, अविसेसादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥ २८८ ॥

सुगमं ।

जहण्णा ॥२८९॥

णाणावरणीयजहण्णदव्वक्खंधाणं च एदासिं जहण्णदव्वक्खंधाणं पि एगसमय-ट्ठिदिदंसणादो ।

तस्स वेयणीय-आउअ-णामा-गोदवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥२९०॥

सुगमं ।

....

वह जघन्य होती है ॥२८६॥

कारण यह कि जघन्य अवगाहना में स्थित ज्ञानावरणीयके स्कन्धोंसे जीव द्वारा सात कर्मोंके स्कन्धोंमें कोई भेद नहीं है ।

इसी प्रकार शेष सात कर्मोंकी प्ररूपणा करनी चाहिये ॥२८७॥

जिस प्रकार ज्ञानावरणीयके संनिकर्षकी प्ररूपणा की गई है उसी प्रकार शेष सात कर्मोंके संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहियें, क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥२८८॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य होती है ॥२८९॥

कारण यह कि ज्ञानावरणीयके जघन्य द्रव्य के स्कन्धोंकी तथा इन दो कर्मोंके जघन्य द्रव्यके स्कन्धों की भी एक समय स्थिति देखी जाती है ।

उसके वेदनीय, आयु, नाम और गोत्रकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ॥२९०॥

यह सूत्र सुगम है ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ।। २९१ ।।

कुदो ? तिण्णमघादिकम्माणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदिसंतकम्मसेसत्तादो आउअस्स अतोमुहुत्तप्पहुडिट्ठिदिसंतकम्मसेसत्तादो ।

तस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ।। २९२ ।।

सुहुमसांपराइयचरिमसमये णट्ठाए खीणकसायचरिमसमए संताभावादो ।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ।। २९३ ।।

जहा णाणावरणीयस्स सण्णियासो कदो तहा एदेसिं दोण्णं कम्माणं कायव्वो ।

जस्स वेयणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणावरणीय-मोहणीय-अंतराइयाणं वेयणा कालदो जहण्णिया णत्थि ।। २९४ ।।

कुदो ? छदुमत्थद्धाए विणट्ठत्तादो ।

तस्स आउ-णामा-गोदवेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ?।।२९५।।

सुगमं ।

....

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ।। २९१ ।।

कारण कि उसके तीन अघाति कर्मोंका स्थितिसत्त्व पल्योपमके असंख्यातवें भागमात्र तथा आयुका स्थितिसत्त्व अन्तर्मुहूर्त आदि मात्र शेष रहता है ।

उसके मोहनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ।। २९२ ।।

कारण किं वह सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें नष्ट हो चुकी है, अत: उसका क्षीणकषायके अन्तिम समयमें सत्त्व सम्भव नहीं है ।

इसी प्रकार दर्शनावरण और अन्तरायकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।। २९३ ।।

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे इन दो कर्मोंका संनिकर्ष करना चाहिये ।

जिस जीवके वेदनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ।।२९४।।

कारण कि उनकी वेदना छद्मस्थ कालमें नष्ट हो चुकी है ।

उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। २९५ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

जहण्णा ।। २९६ ।।

अजोगिचरिमसमए तिण्णं वेयणाणमेगट्ठिदिदंसणादो ।

एवमाउअ-णामा-गोदाणं ।। २९७ ।।

जहा वेयणीयस्स सण्णियासो कओ तहा एदेसिं पि तिण्णं कम्माणं कायव्वो।

जस्स मोहणीयवेयणा कालदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा कालदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। २९८ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा असंखेज्जगुणब्भहिया ।। २९९ ।।

कुदो ? एगसमयं पेक्खिदूण घादिकम्माणं अंतोमुहुत्तमेत्तट्ठिदीए अघादीणं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तट्ठिदीए च अंतोमुहुत्तप्पहुडि ट्ठिदिसंतस्स च असंखेज्जगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स णाणावरणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स दंसणावरणीय-अंतराइयवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। ३०० ।।

सुगमं ।

....

वह जघन्य होती है ।। २९६ ।।

कारण कि अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें उक्त तीन वेदनाओंकी एक (समय) स्थिति देखी जाती है ।

इसी प्रकार आयु, नाम और गोत्र कर्मकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।। २९७ ।।

जिस प्रकारसे वेदनीयका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे इन तीनों भी कर्मोंका करना चाहिये ।

जिस जीवके मोहनीयकी वेदना कालकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना कालकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। २९८ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य असंख्यातगुणी अधिक होती है ।। २९९ ।।

कारण कि एक समयकी अपेक्षा घाति कर्मोंकी अन्तर्मुहूर्त मात्र स्थिति और अघाति कर्मोंकी पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र स्थिति ये दोनों स्थितियाँ तथा अन्तर्मुहूर्त आदि रूप स्थितिसत्त्व भी असंख्यातगुणा पाया जाता है ।

जिस जीवके ज्ञानावरणीय की वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके दर्शनावरणीय और अन्तरायकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। ३०० ।।

यह सूत्र सुगम है ।

जहण्णा ॥ ३०१ ॥

कुदो ? खवगपरिणामेहि सव्वुक्कस्सं घादं पाविदूण खीणकसायचरिमसमए ट्ठिदत्तादो।

तस्स वेयणीय–आउअ–णामा–गोदवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ॥ ३०२ ॥

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ॥ ३०३ ॥

कुदो ? परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धअपज्जत्तसंजुत्ततिरिक्खाउआणुभागं, भवसिद्धियचरिमसमयअसादावेयणीयजहण्णाणुभागं, सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तएण हदसमुप्पत्तियकम्मेण परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेण बद्धणामजहण्णाणुभागं, उच्चागोदमुव्वेल्लिय बादरतेउ–वाउजीवेण सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदेण सव्वविसुद्धेण बद्धणीचागोदजहण्णाणुभागं च पेक्खिदूण एदस्स खीणकसायस्स चरिमसमए वट्टमाणस्स एदेसिं कम्माणं अणुभागस्स अणंतगुणत्तं होदि, वेयणीय–णामा–गोदाणुभागाणं पसत्थभावेण उक्कस्सत्तुवलंभादो । मणुसाउअभावस्स घादवज्जियस्स तिरिक्खाउआदो पसत्थस्स जहण्णादो अणंतगुणत्तं होदि, । कुदो णव्वदे ? चउसट्ठिवदियअप्पाबहुगवयणादो ।

....

वह जघन्य होती है ॥ ३०१ ॥

कारण कि वह क्षपक परिणामोंके द्वारा सर्वोत्कृष्ट घातको प्राप्त होकर क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें स्थित है ।

उसके वेदनीय, नाम और गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजन्घय ? ॥ ३०२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ॥ ३०३ ॥

इसका कारण यह है कि परिवर्तमान मध्यम परिणामके द्वारा बाँधे गये अपर्याप्त सहित तिर्यंच आयुके अनुभागकी अपेक्षा, भव्यसिद्धिक अवस्थाके अन्तिम समयमें असाता वेदनीयके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा हतसमुत्पत्तिककर्मा सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक जीवके द्वारा परिवर्तमान मध्यम परिणामके द्वारा बाँधे गये नाम कर्मके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा, तथा उच्च गोत्रकी उद्वेलना करके सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुए सर्व विशुद्ध बादर तेजकायिक व वायुकायिक जीवके द्वारा बाँधे गये नीच गोत्रके जघन्य अनुभागकी अपेक्षा क्षीणकषायके अन्तिम समयमें वर्तमान इस जीवके इन कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा होता है; क्योंकि, प्रशस्त होनेके कारण वेदनीय, नाम और गोत्रके अनुभागमें उत्कृष्टता पायी जाती है । तिर्यंच आयुकी अपेक्षा प्रशस्त व घातसे रहित मनुष्यायुका अनुभाग जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा होती है ।

शंका – यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान – वह चौंसठ पद रूप अल्पबहुत्वके वचनसे जाना जाता है ।

तस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णिया णत्थि ।। ३०४ ।।

तिस्से तत्थ [1]पदेससत्ताभावादो ।

एवं दंसणावरणीय-अंतराइयाणं ।। ३०५ ।।

जहा णाणावरणीयसण्णियासो कदो तहा एदासिं पि पयडीणं कायव्वो ।

जस्स वेयणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स णाणावरणीय-दंसणा-वरणीय-मोहणीय-अंतराइयवेयणा भावदो जहण्णिया णत्थि ।।३०६।।

कुदो ? अजोगिचरिमसमए एदेसिं [2]पदेससत्ताभावादो ।

तस्स आउअ-णामा-गोदवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ।।३०७।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ।। ३०८ ।।

कुदो ? जसकित्ति-उच्चागोदाणं चरिमसमयसुहुमसांपराइएण बद्धउक्कस्साणुभागस्स सग-सगजहण्णाणुभागादो अणंतगुणस्स अजोगिचरिमसमए उवलंभादो, तिरिक्खअपज्जत्त-संजुत्तआउअभावादो वि मणुसाउअभावस्स पसत्थत्तणेण घादाभावेण च अणंतगुणत्तुवलंभादो।

....

उसके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ।। ३०४ ।।

कारण कि वहाँ उसके प्रदेशोंके सत्त्वका अभाव है ।

इसी प्रकारसे दर्शनावरणीय और अन्तरायकी अपेक्षा प्ररूपणा करनी चाहिये ।।३०५।।

जिस प्रकारसे ज्ञानावरणीय कर्मका संनिकर्ष किया गया है उसी प्रकारसे इन दो प्रकृतियोंके भी संनिकर्षकी प्ररूपणा करनी चाहिये ।

जिस जीवके वेदनीय कर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य नहीं होती ।। ३०६ ।।

कारण कि आयोगकेवलीके अन्तिम समयमें इन कर्मोंके प्रदेशोंके सत्त्वका अभाव है ।

उसके आयु, नाम और गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। ३०७ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ।। ३०८ ।।

कारण यह कि यशःकीर्ति और उच्चगोत्रका अन्तिम समयवर्ती सूक्ष्मसाम्परायिकके द्वारा बाँधा गया उत्कृष्ट अनुभाग अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें अपने अपने जघन्य अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा पाया जाता है, तथा अपर्याप्त सहित तिर्यंच आयुके अनुभागकी अपेक्षा प्रशस्त व घातसे रहित होनेके कारण मनुष्यायुका भी अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

....

(१) प्रतिषु 'पदेसत्ता भावादो' इति पाठः । (२) अ-आ-काप्रतिषु 'पदेसत्ताभावादो' इति पाठः ।

जस्स मोहणीयवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। ३०९ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ।। ३१० ।।

कुदो ? तिण्णं घादिकम्माणं खीणकसाएण घादिज्जमाणअणुभागस्स एत्थ संतसरूवेण उवलंभादो, वेयणीय–णामा–गोदाणं साद–जसगित्ति–उच्चागोदाणुभागस्स बंधेण उक्कस्स–भावोवलंभादो, मणुसाउअभावस्स वि पसत्थत्तणेण अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

जस्स आउअवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ?।। ३११ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ।। ३१२ ।।

कुदो ? वेयणीय–घादिकम्माणं खवगपरिणामेहि एत्थ घादाभावादो मणुस्सेसु पंचिंदियतिरिक्खेसु च मज्झिमपरिणामेण बद्धतिरिक्खअपज्जत्त–(संजुत्त)– आउअजहण्ण[1] भावेसु अणुव्वेल्लिदउच्चागोदेसु सव्वविसुद्धबादरतेउवाउपज्जत्तएसु च अघादिदणीचागोदाणु–भागेसु सगजहण्णादो गोदाणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

....

जिस जीवके मोहनीयकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। ३०९ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ।। ३१० ।।

कारण एक तो तीन घाति कर्मोंका क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती जीवके द्वारा घाता जानेवाला अनुभाग यहाँ सत्त्व रूपसे पाया जाता है, दूसरे वेदनीय कर्मकी साता वेदनीय प्रकृतिके, नामकी यश:कीर्ति प्रकृतिके और गोत्रकी उच्चगोत्र प्रकृतिके अनुभागमें यहाँ बन्धसे उत्कृष्टता पायी जाती है, तीसरे मनुष्यायुका अनुभाग भी प्रशस्त होनेके कारण यहाँ अनन्तगुणा पाया जाता है ।

जिस जीवके आयुकर्म की वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके नामकर्मको छोडकर शेष छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। ३११ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ।।३१२ ।।

कारण कि क्षपक परिणामों के द्वारा यहाँ घात सम्भव न होनेसे वेदनीय और घातिया कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है । तथा मध्यम परिणामके द्वारा जिन्होंने तिर्यंच अपर्याप्त सम्बन्धी आयुके जघन्य अनुभागको बाँधा है ऐसे मनुष्यों एवं पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंमें और उच्च गोत्रकी उद्वेलना न करनेवाले तथा नीच गोत्रके अनुभागको न घातनेवाले सर्वविशुद्ध बादर तेजकायिक एवं वायुकायिक पर्याप्त जीवोंमें गोत्रका अनुभाग अपने जघन्यकी अपेक्षा अनन्तगुणा पाया जाता है ।

....

(१) अ–आ–काप्रतिषु 'जहण्णा' इति पाठः ।

तस्स णामवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। ३१३ ।।

सुगमं ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाण-पदिदा ।। ३१४ ।।

जहण्णमाउअभावं बंधिय सुहुमणिगोदजीवअपज्जत्तेसु उप्पज्जिय हदसमुप्पत्तियं काऊण जदि णामस्स जहण्णाणुभागो कदो तो आउअभावेण सह णामभावो जहण्णो होदि। अण्णहा अजहण्णो होदूण छट्ठाणपदिदो जायदे ।

जस्स णामवेयणा भावदो जहण्णा तस्स छण्णं कम्माणमाउअ-वज्जाण वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। ३१५ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ।। ३१६ ।।

सुगमं ।

तस्स आउअवेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। ३१७ ।।

सुगमं ।

....

उसके नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।।३१३।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी होती है, जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित होती है ।। ३१४ ।।

आयुके जघन्य अनुभागको बाँधकर सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त जीवोंमें उत्पन्न होकर हतसमुत्पत्ति करकें यदि नामकर्मका अनुभाग जघन्य कर लिया है तो आयुके अनुभागके साथ नाम कर्मका अनुभाग जघन्य होता है । इससे विपरीत अवस्थामें वह अजघन्य होकर छह स्थान पतित होता है ।

जिस जीवके नामकर्मकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके आयुको छोडकर शेष छह कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। ३१५ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ।। ३१६ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

उसके आयुकी वेदना क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। ३१७ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

जहण्णा वा अजहण्णा वा, जहण्णादो अजहण्णा छट्ठाणपदिदा ।। ३१८ ।।

सुगमं ।

जस्स गोदवेयणा भावदो जहण्णा तस्स सत्तण्णं कम्माणं वेयणा भावदो किं जहण्णा अजहण्णा ? ।। ३१९ ।।

सुगमं ।

णियमा अजहण्णा अणंतगुणब्भहिया ।। ३२० ।।

कुदो ? सव्वविसुद्धबादरतेउ-वाउकाइयपज्जत्तएसु उव्वेलिदउच्चागोदेसु णीचागोदस्स कयजहण्णभावेसु सेससव्वकम्माणमणुभागस्स अणंतगुणत्तुवलंभादो ।

एवं जहण्णए परत्थाणवेयणासण्णियासे समत्ते वेयणा-
सण्णियासविहाणे त्ति समत्तमणुयोगद्दारं ।

....

वह जघन्य भी होती है और अजघन्य भी होती है । जघन्यकी अपेक्षा अजघन्य छह स्थानोंमें पतित होती है ।। ३१८ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

जिस जीवके गोत्रकी वेदना भावकी अपेक्षा जघन्य होती है उसके सात कर्मोंकी वेदना भावकी अपेक्षा क्या जघन्य होती है या अजघन्य ? ।। ३१९ ।।

यह सूत्र सुगम है ।

वह नियमसे अजघन्य अनन्तगुणी अधिक होती है ।। ३२० ।।

इसका कारण यह है कि जिन्होंने उच्च गोत्रकी उद्वेलना की है तथा नीच गोत्रके अनुभागको जघन्य किया है ऐसे सर्वविशुद्ध बादर तेजकायिक एवं वायुकायिक जीवोंमें शेष सब कर्मोंका अनुभाग अनन्तगुणा पाया जाता है ।

इस प्रकार जघन्य परस्थान वेदनाके संनिकर्षके समाप्त होनेपर
वेदनासंनिकर्षविधान नामक अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।